भारत का एक सुप्रसिद्ध हिन्दी कृषि समाचार-पत्र (न्यूज़ पेपर)

खेती दुनिया

www.khetiduniyan.in

KHETI DUNIYAN, PATIALA

All Subject to Patiala Jurisdiction.

BOOK POST – PRINTED MATTER

Excellence in Agri Info

KHETI DUNIYAN

• Issue Dated 14-10-2023• Vol.7 No.41 • H.O. : KD Complex, Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) Ph. : 0175-2214575 • Page : 08 E-mail : khetiduniyan1983@gmail.com

विश्व का सबसे भारी कद्दू

अमेरिका के कैलीफोर्निया प्रांत में स्थित हाफ मून बे में 50वें वार्षिक वर्ल्ड पम्पकिन चैम्पियनशिप कद्दू वज़न में यह कद्दू ना सिर्फ चैम्पियन बना, बल्कि नया विश्व रिकॉर्ड भी बनाया। इसका वज़न 1247 किलोग्राम निकला और यह विश्व का सबसे भारी कद्दू बन गया है। इसको मिनेसोटा प्रांत के अनोका के 43 वर्षीय बागवानी अध्यापक ट्रैविस गींगर ने उगाया है। इसके लिए गींगर को ईनाम के रूप में 30 हज़ार डॉलर (करीब 25 लाख रुपए) दिए गए। नया रिकॉर्ड बनाने के बाद ट्रेविस गींगर ने खुशी प्रकट की।

दीवाली से पहले किसानों को मिलेगा तोहफा

रबी फसलों की एम.एस.पी. में हो सकती है बढ़ोत्तरी

केन्द्र सरकार किसानों को बहुत बड़ा तोहफा दे सकती है। कहा जा रहा है कि केन्द्र सरकार रबी फसलों के मिनिमम सपोर्ट प्राइस (एम.एस.पी.) में बढ़ोत्तरी कर सकती है। इससे करोड़ों किसानों को फायदा होगा।

सूत्रों के मुताबिक केन्द्र सरकार गेहूं की एम.एस.पी. में 150 से 175 रुपए प्रति क्विंटल की दर से वृद्धि कर सकती है। इससे खास कर उत्तर प्रदेश, हरियाणा, बिहार, पंजाब, राजस्थान और मध्य प्रदेश के किसान सबसे अधिक लाभांवित होंगे। इन्हीं राज्यों में सबसे अधिक गेहूं की खेती होती है।

मीडिया रिपोर्ट के मुताबिक केन्द्र सरकार अगले साल के लिए गेहूं की एम.एस.पी. में 3 से 10 प्रतिशत के बीच बढ़ोत्तरी कर सकते हैं। अगर केन्द्र सरकार ऐसा करती है, तो गेहूं का मिनिमम सपोर्ट प्राइस 2300 रुपए प्रति क्विंटल तक पहुंच सकता है। हालांकि, वर्तमान में गेहूं की एम.एस.पी. 2125 रुपए प्रति क्विंटल है। इसके अलावा सरकार मसूर दाल की एम.एस.पी. में भी 10 फीसदी तक की बढ़ोत्तरी कर सकती है।

वहीं, सरसों और सन फ्लावर की एम.एस.पी. में 5 से 7 प्रतिशत का इजाफा किया जा सकता है। उम्मीद है कि आने वाले एक सप्ताह में केन्द्र सरकार रबी, दलहन और तिलहन फसलों की एम.एस.पी. बढ़ाने के लिए मंजूरी दे सकती है। खास बात यह है कि एम.एस.पी. में बढ़ोत्तरी करने का फैसला मार्केटिंग सीज़न 2024-25 के लिए किया जाएगा।

23 फसलों को किया गया शामिल

कृषि लागत और मूल्य आयोग की सिफारिश पर केन्द्र मिनिमम सपोर्ट प्राइस तय करती है। एम.एस.पी. में 23 फसलों को शामिल किया गया है, 7 अनाज, 5 दलहन, 7 तिलहन और 4 नकदी फसलें शामिल हैं। रबी फसल की बुवाई अक्तूबर से दिसम्बर महीने के बीच की जाती है। वहीं, फरवरी से मार्च और अप्रैल महीने के बीच इसकी कटाई होती है।

एम.एस.पी. में शामिल फसलें

अनाज : गेहूं, धान, बाजरा, मक्का, ज्वार, रागी और जौं

दलहन : चना, मूंग, मसूर, अरहर, उड़द

तिलहन : सरसों, सोयाबीन, सीसम, कुसुम, मूंगफली, सूरजमुखी, निगर्सिड

नकदी : गन्ना, कपास, खोपरा और कच्चा जूट

ग्राफ्टिंग के जरिए एक पौधे पर दो-दो सब्ज़ियों को उगाने का प्रयोग सफल

एच.ए.यू. में बैंगन के पौधे पर लगते हैं टमाटर

जंगली बैंगन के पौधे पर टमाटर और मिर्च के पौधों पर शिमला मिर्च लगना अब संभव है। चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के सब्ज़ी अनुभाग में सब्ज़ियों की ग्राफ्टिंग तकनीक के जरिए बागवानी की जा रही है, जिसमें दो अलग-अलग पौधों को एक साथ जोड़ कर एक नया पौधा विकसित किया जाता है। सोलनेसियस यानी बैंगन, टमाटर, मिर्च और शिमला मिर्च सब्ज़ियों और कद्दू वर्गीय बेल वाली सब्ज़ियों यानी खीरा, टिंडा, तरबूज, खरबूजे आदि में ग्राफ्टिंग संभव है।

ग्राफ्टिंग तकनीक में जंगली बैंगन पर टमाटर, जंगली मिर्च पर शिमला मिर्च को पोली हाऊस में निमेटोड से बचाव के लिए ग्राफ्ट किया जा सकता है। टमाटर का तना कमज़ोर होता है और जंगली बैंगन का मज़बूत। ऐसे में बैंगन की मज़बूत जड़ों पर टमाटर की अच्छी पैदावार ली जा सकती है। किसान चाहे तो एक ही पौधे पर दोनों सब्ज़ियां भी ले सकते हैं।

क्या है ग्राफ्टिंग विधि

इस तकनीक में दो अलग-अलग पौधों को उनके गुणों और उत्पादन के आधार पर एक साथ जोड़ कर एक नया पौधा तैयार किया जाता है। निचले भाग को रूट स्टॉक और ऊपर के हिस्से को स्यन कहते हैं। निचले भाग 45 डिग्री का कट रूट स्टॉक और स्थान से लगा कर उसे बिना रसायन के मात्र क्लिप द्वारा जोड़ा जाता है और चार दिन हिलिंग चैंबर सूती गीले कपड़े की टनल के अंदर रखा जाता है। जिसमें 80 प्रतिशत हयूमिडिटी और 22-28 डिग्री सैल्सियस का तापमान अनिवार्य है।

कम होगा रसायनों का प्रयोग

ग्राफ्टिंग से कम उर्वरक, पानी, रसायन या अन्य तत्वों के न्यूनतम प्रयोग से भी उच्च गुणवत्ता वाला उत्पादन लिया जा सकेगा। किसान आय का करीब 40 प्रतिशत कीटनाशकों व दवाओं पर खर्च करता है। इसके बाद भी सब्ज़ियों में कुछ न कुछ नुकसान हो ही जाता है।

किसानों को दी जाएगी ट्रेनिंग

"किसानों को भी ग्राफ्टिंग की ट्रेनिंग दी जाएगी। बेरोज़गार युवा इस विधि को सीखकर इसे व्यवसाय के रूप में भी अपना सकेंगे। इसके साथ-साथ पौधे की शक्ति और उपज में वृद्धि के लिए प्रयास किए जा रहे हैं। ग्राफ्टिंग यूनिट के निर्माण के बाद प्रदेश के किसानों की समस्याओं के अनुरूप भविष्य में ग्राफ्टिंग पौध तैयार करेंगे।"

– प्रो. बी.आर. काम्बोज, कुलपति, एच.ए.यू., हिसार

Kan Biosys
THE MICROBIAL COMPANY

Job Vacancy

कॅन बायोसिस

कॅन बायोसिस प्रा.लि.ग्लोबल माइक्रोबियल कंपनी में

एरिया सेल्स मैनेजर, टेरिटरी मैनेजर, फील्ड असिस्टेंट, एग्रोनॉमिस्ट

पंजाब हरियाणा

पद संख्या : 20

योग्यता: B.Sc.Agri./M.Sc.Agri

अनुभव:
एरिया सेल्स मैनेजर - 5 साल
टेरिटरी मैनेजर - 2 से 3 साल
फील्ड असिस्टेंट - 1 से 2 साल
एग्रोनॉमिस्ट - 4 से 5 साल

8484006196 | hr@kanbiosys.com

कोर्डिसेप्स : एक औषधीय मशरूम

और

कोर्डिसेप्स मिलिटेरिस प्रजाति का वैज्ञानिक उत्पादन

सतीश कुमार मेहता, जगदीप सिंह और भूपेन्द्र सिंह,
सायना नेहवाल कृषि प्रौद्योगिकी, प्रशिक्षण और शिक्षा संस्थान,
पौध रोग विभाग, चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

परिचय : कोर्डिसेप्स एक प्रकार का फफूंद है, जिसमें लगभग 400 प्रजातियां हैं। इनमें से *कोर्डिसेप्स साइनेंसिस* सबसे महत्वपूर्ण प्रजाति है और जो हिमालय के ऊपरी स्थानों (3000 से 5500 मीटर तक की ऊंचाई) जैसे नेपाल, भूटान और तिब्बत, भारत और चीन के सीमांत क्षेत्रों में पाई जाती है। यह एक औषधीय मशरूम है और इसके संभावित स्वास्थ्य लाभ के कारण इसे बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है और हाल ही में वैश्विक रूप से प्रचलित हो चुकी है।

कोर्डिसेप्स का इतिहास कई सदियों पुराना है और इसकी उत्पत्ति पारम्परिक तिब्बती और चीनी चिकित्सा में हुई है और इसका इस्तेमाल 1000 से अधिक वर्षों से हो रहा है। तिब्बती पशु-पालकों ने यह महसूस किया कि उनके पशु जब उन जगह के घास चरते है, जहां पर *कोर्डिसेप्स* उगता है, पशु अधिक ऊर्जावान और मज़बूत हो जाते हैं। पारम्परिक चिकित्सा में इसका मुख्य उपयोग गुर्दे और फेफड़ों को मज़बूत और सुदृढ़ करने और दीर्घायु को बढ़ावा देने के लिए किया जाता था। इसे थकान, श्वसन संबंधी समस्याओं, गुर्दे की बीमारियों, कम इच्छा शक्ति और नपुंसकता जैसी कई बीमारियों के इलाज में भी उपयोग किया जाता रहा है। इस पर 20वीं सदी में ज्यादा ध्यान दिया गया, जब चीनी वैज्ञानिकों ने इसके अद्वितीय जीवन-चक्र और औषधीय गुणों पर प्रकाश डाला। उन्होंने देखा कि इस मशरूम की फफूंद कीड़ों के लारवों में संक्रमण करती है और अंत में उन्हें मुम्मियाने बना देती है, जिससे केटरपिलर फफूंद का उद्भव होता है। इसके बाद कोर्डिसेप्स के संभावित स्वास्थ्य लाभों और वैज्ञानिक खोज में आगे बढ़ने में मदद मिली।

कोर्डिसेप्स की ज्यादातर प्रजातियां प्राकृतिक रूप से पैदा होती हैं और वे सदियों से विभिन्न क्षेत्रों में अपने प्रजनन को बनाए रख रही है। इनका एक विशेष जीवन-चक्र होता है और इनके अंकुरण और फलन के लिए विशेष कीटों की आवासीय प्रजातियों की ज़रुरत होती है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि

चित्र 2 : कोर्डिसेप्स की कली अवस्था।

कोर्डिसेप्स की कुछ प्रजातियां जो दुर्लभ या विशेष इलाकों में पैदा होती है जलवायु परिवर्तन, वन कटाव या अत्याधिक दोहन से लुप्त होने के कगार पर है। *कोर्डिसेप्स* की विशेष मांग और सीमित उपलब्धता के कारण शोधकर्ताओं ने 1970 के दशक में इसे एक पोषक-युक्त माध्यम (सब्सट्रेट) पर विकसित करने में सफलता प्राप्त की।

इसका उपयोग प्रबलभूति को बढ़ाने, ऊर्जा स्तरों को बेहतर बनाने, प्रति रक्षा प्रणाली और समग्र स्वास्थ्य को बढ़ावा देने के लिए अपनाया जाने वाला एक आहार सप्लीमेंट और औषधीय रूप में विश्वव्यापी रूप से प्रसिद्ध है। इसके उपयोग से खिलाड़ियों के प्रदर्शन, ऊर्जा स्तर, प्रतिरक्षा प्रणाली इत्यादि में सुधार के साथ-साथ इसमें एंटीऑक्सीडेंट, एडैप्टोजेनिक गुण इत्यादि भी मौजूद होते हैं, जिस वजह से इस मशरूम के शोध पर पूरे विश्व में ज्यादा ध्यान दिया जाने लगा है। आजकल यह मशरूम कई स्वरूप जैसे कैप्सूल, पाउडर, निष्कर्षण और चाय के रूप में बाज़ार में उपलब्ध मिलती है।

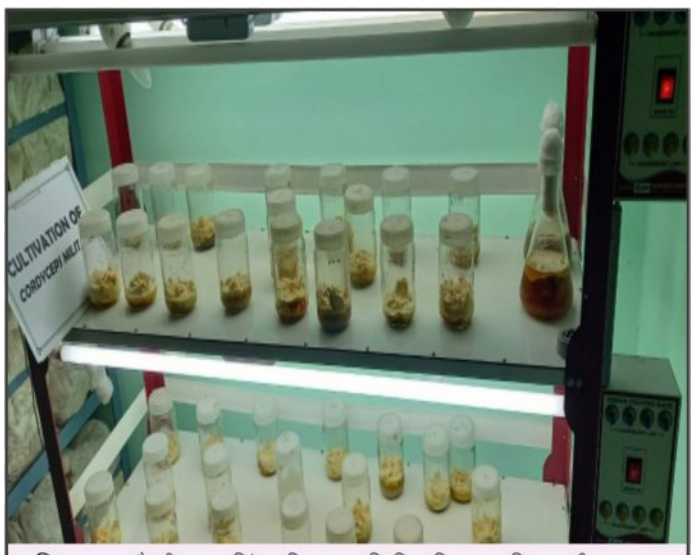

चित्र 1 : चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय हिसार की मशरूम टैक्नोलॉजी प्रोगशाला में कॉर्डिसेप्स मिलिटेरिस के उत्पादन का परिदृष्य।

इसे आहार सप्लीमेंट के रूप में, संघटित खाद्य, पेय, पारम्परिक औषधि निर्माण इत्यादि में प्रयोग किया जाने लगा है।

इस मशरूम के उत्पादों की विश्वव्यापी मांग तो बढ़ रही है, किन्तु इसके उत्पादन का आंकड़ा उपलब्ध नहीं है। इस मशरूम की वैज्ञानिक शोध के प्रमाणीकरण, जागरूकता, उपलब्धता, ई-कॉमर्स, वैश्विक व्यापार इत्यादि की वृद्धि से इसके उत्पादों को उच्च-स्तर पर बढ़ने में सुविधा मिली है। कई एशियाई देशों जैसे चीन, दक्षिण कोरिया, जापान इत्यादि में तो *कोर्डिसेप्स* के पारम्परिक उपयोग के कारण इसकी मांग मज़बूत बनी रहती है। बल्कि इसकी मांग उत्तर अमेरिका, यूरोप, ऑस्ट्रेलिया इत्यादि के अलावा अन्य कई देशों में भी बढ़ती नज़र आ रही है।

औषधीय महत्व : इस मशरूम पर उपलब्ध जानकारी के अनुसार इसमें बायोएक्टिव कम्पाउंड्स होते हैं, जो विभिन्न प्रतिरक्षा कोशिकाओं और इम्यून प्रतिक्रियाओं को बढ़ाते हैं, जो संक्रमण से बचाते हैं। यह शारीरिक और मानसिक तनाव को कम करने के लिए एडाप्टोजन के रूप में भी सहायक है। यह ऊर्जा स्तर, सहन शक्ति, खेल क्षमता में सुधार, ऑक्सीजन उपयोग को बढ़ा कर थकान को कम करता है, इसलिए इसका उपयोग खिलाड़ियों और ऐसे व्यक्तियों के बीच लोकप्रिय हो रहा है, जो प्राकृतिक ऊर्जा को बढ़ाने की तलाश में रहते हैं। पारम्परिक चीनी चिकित्सा में यह श्वसन संबंधी स्थितियों जैसे दमा, खांसी और ब्रोंकाइटिस के लिए उपयोग होता है, क्योंकि यह ब्रॉन्कोडाइलेटर और एंटी-इंफ्लेमेटरी गुणों से भरपूर है, जो सूजन को कम करने और फेफड़ों की कार्यक्षमता को सुधारने में मदद करता है। इसमें एंटीऑक्सीडेंट भी भरपूर मात्रा में मिलते हैं, जो शरीर में फ्री रेडिकल्स और ऑक्सीडेटिव तनाव द्वारा होने वाले नुकसान से सुरक्षा प्रदान करने में सहायक होते हैं। आजकल इसका सेवन सम्पूर्ण स्वास्थ्य, दीर्घायु और स्वस्थ बुढ़ापे के लिए भी किया जा रहा है।

कॉर्डिसेप्स के उत्पाद के स्वरूप : *कॉर्डिसेप्स* मशरूम के एक्सट्रैक्ट से आमतौर पर कैप्सूल या टैबलेट तैयार किए जाते है, ताकि इसका आसानी रोज़ाना की खुराक में सेवन किया जा सके। इसका पाउडर भी एक लोकप्रिय उत्पाद है, जिसे स्मूदीज, जूस, कॉफी, चाय, दही, सूप इत्यादि जैसे भोजनों या अन्य पेयों में छिड़क कर या मिला कर सेवन किया जा रहा है। इसके एक्सट्रैक्ट तरल या टिंचर्स के रूप में उपलब्ध होते है और इनमें से बायोएक्टिव पदार्थों को निकाल कर सीधा अथवा अन्य पेयों या भोजन के साथ मिला कर सेवन किया जा रहा है। चिकित्सा के क्षेत्र में इसे अन्य जड़ी-बूटियों के साथ मिश्रित करके बचा जा रहा है। इसके उत्पाद को विभिन्न व्यंजनों में स्वाद और बनावट के लिए इसे आमतौर पर सूप, स्टिर फ्राई, स्टू, सॉस इत्यादि में मिला कर प्रयोग किया जा रहा है। कुछ व्यंजनों में तो सूखे कॉर्डिसेप्स को पानी में भिगो कर पुनः हाइड्रेट करके भी प्रयोग में लिया जाता है।

कॉर्डिसेप्स का उत्पादन और विपणन : *कॉर्डिसेप्स मिलिटेरिस* का कई देशों में उत्पादन किया जाने लगा है, जिनमें चीन, जापान, कोरिया, भूटान, नेपाल, भारत और अमेरिका शामिल हैं। *कोर्डिसेप्स* की सामान्यतया ज्यादातर प्रजातियां जंगली या नजदीकी वनों में पाई जाती हैं। *कॉर्डिसेप्स* उत्पादों का विपणन स्वदेशी और विदेशी बाज़ार में विभिन्न रूपों में होता है। इसके उत्पादों को आमतौर पर सप्लीमेंट रूप में बाज़ार में बेचा जा रहा है। कई कम्पनियों द्वारा विभिन्न ब्रांड नामों के तहत *कॉर्डिसेप्स* सप्लीमेंट्स उत्पाद तैयार किए जाते हैं और ये आमतौर पर औषधीय दुकानों, ऑनलाइन रिटेलर्स, स्वास्थ्य खाद्य की दुकानों और प्राकृतिक स्वास्थ्य स्टोर्स में उपलब्ध होते है।

सी. मिलिटेरिस का उत्पादन या इसके उत्पादों का निर्माण कई फार्मास्यूटिकल और फूड सप्लीमेंट कंपनियां कर रही हैं। इसके उत्पादन की भारत में तेज़ी से बढ़ने की संभावनाएं जागृत हो रही हैं। हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड जैसे कई राज्यों में इसके विकास में वृद्धि हुई है। सरकार ने स्थानीय समुदायों की आजीविका के लिए *कॉर्डिसेप्स* के उत्पादन को बढ़ावा दिया है। भारत में भी विभिन्न कम्पनियों और आपूर्तिकर्ताओं में इस मशरूम के प्रति रुझान बढ़ रहा है। ये कम्पनियां आमतौर पर सूखे मशरूम, एक्सट्रेक्ट

चित्र 3 : कोर्डिसेप्स की अपरिपक्व अवस्था।

और आहारी पूरकों सहित विभिन्न कॉर्डिसेप्स आधारित उत्पादों की विविधता प्रदान कर रही है, जिनमें से कुछ का उल्लेख नीचे किया है :

इसके उत्पादन में कई निजी प्रयोगशालाएं कार्यरत है और कुछ भारतीय फार्मास्यूटिकल/पोषणीय कम्पनियां भी इस मशरूम पर आधारित उत्पादों का उत्पादन और पूर्णाहार करती हैं।

चित्र 4 : कोर्डिसेप्स की पपिक्व अवस्था (स्त्रोत : इन्टरनेट)

कॉर्डिसेप्स के उत्पादों का मूल्य : भारत में *सी. मिलिटेरिस* का बाज़ार मूल्य विभिन्न कारकों जैसे गुणवत्ता, ब्रांड और मूल्यांकन पर निर्भर करता है। एक अनुमान के अनुसार सूखे मशरूम की कीमत लगभग 5000 से 10000 रुपए प्रति

शेष पृष्ठ 6 पर

पपीते के रोगों का प्रबंधन

डॉ. देवी दयाल नारंग, कृषि विशेषज्ञ (सेवा–निवृत),
पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना (मो.94647–20231)

क्षेत्रफल की दृष्टि से पपीता हमारे देश का पांचवां लोकप्रिय फल है। इस फल में विटामिन ए, सी एवं अन्य खनिज लवण प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। कच्चे तथा पक्के फल से कई उत्पाद तैयार किए जाते हैं। इस व्यवसायिक फसल को कई रोग लगते हैं, जिससे पौधे/फलों का उत्पादन कम होता है। पपीते के मुख्य रोगों की पहचान तथा रोकथाम के बारे में इस लेख में बताया गया है।

1. आर्द्र गलन : यह रोग पौधशाला में पीथियम एफैनिडरमेटन नामक कवक के कारण होता है। इसका प्रभाव नये अंकुरित पौधे पर होता है तथा पौधे का तना ज़मीन के पास से सड़ जाता है। पौधा फिर मुरझा कर नीचे गिर जाता है।

बचाव : नर्सरी की मिट्टी को बोने से पहले फारमेलिउहाईड 2.5 प्रतिशत घोल से उपचारित कर पॉलीथीन से 48 घंटों के लिए ढक देना चाहिए तथा बीज को कैप्टान 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से उपचारित कर बोना चाहिए। पौधशाला में इस रोग से बचाव हेतु मैटालेक्सिल (8 प्रतिशत) + मैंकोज़ेब (64 प्रतिशत) 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से पौधों

की जड़ के पास अच्छी तरह से डाल कर तर कर देना चाहिए, जिससे जड़ सड़न रोग से सम्पूर्ण सुरक्षा मिलती रहे।

2. चूर्णित फफूंद : यह रोग ओडियम थ्यूडिकम एवं ओडियम कैरिकी नामक कवक से होता है। पत्तियों पर सफेद चूर्ण जैसा जमाव हो जाता है तथा बाद में पत्तियां सूख जाती हैं।

बचाव : इसकी रोकथाम के लिए सल्फेक्स (3 ग्राम प्रति लीटर पानी में) का छिड़काव करना चाहिए।

3. पर्ण कुंचन रोग : यह एक गंभीर विषाणु रोग है। आरम्भ में पौधों का विकास रुक जाता है तथा पत्तियां गुच्छानुमा हो जाती हैं और छोटा आकार हो जाता है। पत्तियों का ऊपरी सिरा अन्दर की ओर मुड़ जाता है। प्रभावित पौधे में फूल और फल नहीं लगते हैं।

4. पपीता का रिंग स्पॉट रोग : यह भी विषाणु रोग है। इसके कारण पपीते की पत्तियां कटी-फटी निकलती हैं। पत्तियों के तने एवं फलों पर छोटे गोलाकार धब्बे पड़ जाते हैं एवं फलन बहुत कम हो जाता है।

बचाव : * यह दोनों विषाणु रोग वर्षा में अधिक होते हैं। यह रोग सफेद मक्खी तथा माहू कीटों से फैलते हैं।

* इन कीटों की रोकथाम के लिए 1 मिलीलीटर मैलाथियान 50 प्रतिशत या 2 मिलीलीटर डाईमेथोएट 30 प्रतिशत ताकत प्रति एक लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

* अगर नीम की खली खाद का उपयोग करें, तो इन विषाणु रोगों का प्रकोप कम होता है।

* इस रोग से प्रभावित पौधों को उखाड़ कर साथ-साथ जलाते जाएं ताकि यह रोग तन्दरुस्त पौधों को प्रभावित ना करे।

* प्रभावित पौधों से रोपण हेतु नया बीज नहीं लेना चाहिए।

5. पपीते में फल विकृत : यह विकृति फलन की प्रारंभिक अवस्था में ही शुरू हो जाती है, लेकिन इनका विकराल स्वरूप पकने की अवस्था और पेड़ की वयस्क अवस्था में एकाएक बढ़ जाता है।

यह प्राय: सर्दियों में जब तापमान न्यूनतम होता है, तब अधिक प्रकोप दिखाई देता है।

बचाव : विकृत फल विकार से निजात पाने हेतु 5 ग्राम बोरेक्स (Borax) प्रति पौधा पुष्पन एवं फलन के प्रारम्भ होने पर देना, अधिक लाभदायक है। यदि शुरूआती दिनों में बोरॉन (Boron) नहीं दे पाते, पर फल विकास के समय 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिला कर पत्तियों पर छिड़काव करना चाहिए ताकि फल विकृति कम हो।

6. फलों का सड़ना (एन्थ्रैक्नोज़) : यह एक कवक रोग है, जिसको 'कोलिटोट्राईकम गिलयोस्प्रोरोडम' कहते हैं। यह खास तौर पर फलों के ऊपर छोटा जलीय धब्बा बन जाता है, जो बाद में बढ़ कर पीले या काले रंग का हो जाता है। यह रोग फल लगाने से लेकर पकने तक लगता है, जिसके कारण फल पकने से पहले ही गिर जाता है।

बचाव : इसकी रोकथाम के लिए मैंकोज़ेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से मिला कर छिड़काव फल लगने की उग्र अवस्था के समय 10-15 दिनों के अंतराल पर

लगातार करें।

यह जानकारी पपीता उत्पादकों के लिए अति आवश्यक है। आप इसका समय पर उपयोग करके पपीता फल तंदरुस्त बाज़ार में बेचेंगे, तो अधिक मूल्य मिलेगा और आमदन अच्छी होगी।

खेती दुनिया

KHETI DUNIYAN

मुख्य कार्यालय

के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड, नजदीक शेरे पंजाब मार्केट, पटियाला - 147001 (पंजाब)

फोन : 0175-2214575

मो. 90410-14575

E-mail : kdpublications@yahoo.co.in

वर्ष : 07 अंक : 41

तिथि : 14-10-2023

सम्पादक

जगप्रीत सिंह

मुख्य शाखाएं

पटियाला

फोन : 0175-2214575

मो. 90410-14575

मुम्बई

दिल्ली

लुधियाना

बण्ठिडा

सम्पादकीय बोर्ड

डॉ. डी.डी. नारंग

डॉ. जे.एस. डाल

डॉ. आर.एम. फुलझेले

कम्पोजिंग

एक्ता कम्प्यूटरज़ पटियाला

Editor, Printer & Publisher **JAGPREET SINGH**
Printed at **Vargenia Printers**, Sher-e-Punjab Market, Gaushala Road, PATIALA &
Published at Patiala for Prop. **JAGPREET SINGH**

हल्दी को बढ़ावा देने को राष्ट्रीय हल्दी बोर्ड का गठन करने के लिए अधिसूचना जारी

हल्दी उत्पादक खुश, बोले - बेहतर ट्रेनिंग व निर्यात के तौर-तरीके सिखाए सरकार

हल्दी और इससे बने उत्पादों को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय हल्दी बोर्ड का गठन करने के लिए अधिसूचना जारी करने के साथ ही पंजाब के हल्दी उत्पादकों में खुशी की लहर है। सरकार का मानना है कि बोर्ड की गतिविधियां हल्दी उत्पादकों की बेहतर

भलाई और समृद्धि में योगदान देंगी, जिससे उत्पादकों को उनकी पैदावार की बेहतर कीमत मिल सकेगी। अनुसंधान, बाज़ार विकास, बढ़ती खपत और मूल्य संवर्धन में बोर्ड की गतिविधियां यह भी सुनिश्चित करेंगी कि हमारे उत्पादक व प्रोसेसर उच्च गुणवत्ता वाली हल्दी एवं हल्दी उत्पादों के निर्यातकों के रूप में वैश्विक बाज़ारों में अपनी प्रमुख स्थिति बनाए रखना जारी रखेंगे।

हल्दी उत्पादकों को प्रोत्साहित करने के लिए अधिसूचना जारी करने पर खुशनुमा प्रतिक्रिया देते हुए हरचोवाल गांव (गुरदासपुर ज़िला) के हल्दी उत्पादक नवतेज सिंह कहते है कि यह बहुत अच्छा कदम है। सरकार को हल्दी उत्पादकों का यूनिट (कोऑपरेटिव सोसायटी जैसा) बनाना चाहिए, जिसमें हल्दी उत्पादन के चाहवान किसानों को ही शामिल करना चाहिए, जो यही खेती करें और इसी को ही बढ़ावा दें। सरकार उनको हल्दी के अधिक से अधिक उत्पादन बनाने की बेहतर ट्रेनिंग दे, हल्दी उत्पादों को निर्यात करने के तौर-तरीके सिखाए और उनकी आर्थिक मदद भी करे। तब जाकर सरकार का मकसद पूरा हो सकेगा। गौर हो कि नवतेज सिंह अपने गांव में अब 10 एकड़ में हल्दी की खेती करते है। शुरूआत उन्होंने 4 एकड़ से की थी। वह अपनी हल्दी का पाउडर बना कर बेचते है।

पंजाब में हल्दी

पाकिस्तान के साथ लगते पंजाब में हल्दी की कई किस्मों के अलावा पंजाब हल्दी-1, पंजाब हल्दी-2, राजापुरी की खेती की जाती है। पंजाब हल्दी-1 से प्रति एकड़ 110 क्विंटल से 130 क्विंटल तक उत्पादन होता है।

20 से अधिक राज्यों में होती है हल्दी की खेती

भारत दुनिया में हल्दी का सबसे बड़ा उत्पादक, उपभोक्ता और निर्यातक है। वर्ष 2022-23 में देश में 3.24 लाख हैक्टेयर में हल्दी की खेती की गई थी, जिससे 11.61 लाख टन (वैश्विक हल्दी उत्पादन का 75 प्रतिशत से अधिक) उत्पादन हुआ था। देश में हल्दी की 30 से अधिक किस्में 20 से अधिक राज्यों में उगाई जाती हैं। हल्दी के सबसे बड़े उत्पादक राज्य महाराष्ट्र, तेलंगाना,

कर्नाटक और तामिलनाडु हैं। पंजाब में भी हल्दी की खेती की जाती है। हल्दी के विश्व व्यापार में भारत की हिस्सेदारी 62 प्रतिशत से अधिक है। 2022-23 के दौरान 380 से अधिक निर्यातकों ने 207.45 मिलियन अमेरिकी डॉलर मूल्य की 1.534 लाख टन हल्दी और हल्दी उत्पादों का निर्यात किया था। भारतीय हल्दी के लिए प्रमुख निर्यात बाज़ार बांग्लादेश, संयुक्त अरब अमीरात, अमेरिका और मलेशिया हैं। बोर्ड की केंद्रित गतिविधियों के साथ यह उम्मीद है कि हल्दी निर्यात वर्ष 2030 तक 1 बिलियन अमेरिकी डॉलर तक पहुंच जाएगा।

किसान अपने स्तर पर उर्वरकों की परख कैसे करें?

बी.एस. द्विवेदी व योगेन्द्र सिंह, सह-प्राध्यापक एवं अनिल नागवंशी, पीएच.डी. छात्र, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (मध्य प्रदेश)

अधिकतम उपज प्राप्त करने के लिए भूमि की उर्वरा शक्ति को उच्च स्तर पर बनाए रखना नितान्त आवश्यक है। उर्वरक और खाद के इस्तेमाल द्वारा मिट्टी की उर्वरा शक्ति का संरक्षण तथा पौधों के पोषक तत्वों की पूर्ति की जाती है। सामान्यतः खाद तथा उर्वरक शब्द पर्यायवाची के रूप में प्रयोग किए जाते हैं, तथापि खाद का तात्पर्य कार्बनिक खादों (जैसे गोबर, खली की खादें आदि) से होता है, जबकि उर्वरक शब्द का प्रयोग अकार्बनिक तथा संश्लिष्ट कार्बनिक पदार्थों के सान्द्रित रूप के लिए होता है। इनमें एक या एक से अधिक पोषक तत्व विलेय घुलनशील तथा प्राप्य रूप में पाए जाते हैं। उर्वरक कारखानों में तैयार किए जाते हैं तथा इसमें पोषक तत्वों की मात्रा अधिक पाई जाती है।

खेती के प्रयोग में लाए जाने वाले कृषि निवेशों में रासायनिक उर्वरक सबसे महंगा निवेश है। उर्वरकों के अधिकतम मांग की अवधि के समय अर्थात् खरीफ एवं रबी के पूर्व उर्वरक फैक्टिरियों तथा विक्रेताओं द्वारा नकली और मिलावटी उर्वरक बनाने एवं बाज़ार में उतारने की भरसक कोशिश की जाती है और इसका सीधा प्रभाव किसान पर पड़ता है।

नकली तथा मिलावटी उर्वरकों की समस्या से निपटने हेतु सरकार यद्यपि प्रतिबद्ध है, फिर भी यह आवश्यक है कि खरीददारी करते समय किसान भाई उर्वरकों की शुद्धता मोटे तौर पर ठीक उसी तरह से परख लें जैसे बीजों की शुद्धता, बीज को दांतों से दबाने पर कट्ट और किच्च की आवाज़ से, कपड़े की गुणवत्ता उसे छू कर या मसल कर, घड़े की पहचान उसे ठोंकने पर टंन और खंट्ट की आवाज़ से तथा दूध की शुद्धता की जांच उसे उंगली से टपकाकर की जाती है। प्रचलित उर्वरकों में से अधिकांशतया यूरिया, डी.ए.पी., ज़िंक सल्फेट तथा एम.ओ.पी. आदि नकली / मिलावटी रूप में बाज़ार में उतारे जाते हैं। खरीददारी करते समय किसान इसकी परख निम्न सरल विधि से कर सकते हैं।

शुद्ध यूरिया :

1. सफेद, चमकदार, लगभग समान आकार के गोल दाने।
2. पानी में घुलनशील तथा छूने पर ठंडा लगता है।
3. गर्म तवे में रखने पर पिघल जाता है और आंच तेज़ करने पर अमोनिया की गंध आती है।
4. फूंकने में नम हो जाता है।

शुद्ध डी.ए.पी. :

1. कठोर, दानेदार, भूरा, काला या बादामी रंग, नाखूनों से तोड़ने पर आसानी से नहीं टूटता है।
2. तवे पर धीमी आंच में गर्म करने से दाने फूल कर बड़े हो जाते है।
3. डी.ए.पी. के कुछ दानों को लेकर तम्बाकू की तरह उसमें चूना मिला कर रगड़ने पर तीक्ष्ण गंध आती है।
4. हथेली में बंद करके फूंक मारने पर गीला हो जाता है।

शुद्ध ज़िंक सल्फेट :

1. ज़िंक सल्फेट में मुख्यतः मैग्नीशियम सल्फेट मिलावटी रसायन के रूप में प्रयोग किया जाता है। भौतिक रूप से समानता के कारण नकली-असली की पहचान करना बहुत कठिन हो जाता है।
2. ज़िंक सल्फेट के घोल में पतला कास्टिक का घोल मिलाने पर सफेद, मटमैला मांड जैसा अवक्षेप बनता है, जिसमें गाढ़ा कास्टिक का घोल मिलाने पर अवक्षेप पूर्णतया घुल जाता है। यदि ज़िंक सल्फेट की जगह मैग्नीशियम सल्फेट है, तो अवक्षेप घुलता ही नहीं है।
3. ज़िंक सल्फेट के घोल में डी.ए.पी. का घोल मिलाने पर थक्केदार घना अवक्षेप बन जाता है, जबकि मैग्नीशियम सल्फेट के साथ ऐसा नहीं होता।

शुद्ध म्यूरेट ऑफ पोटाश (एम.ओ.पी.) :

1. सफेद कणाकार, पिसे नमक तथा लाल मिर्च जैसा मिश्रण।
2. ये कण नम करने पर आपस में नहीं चिपकते।
3. पानी में घोलने पर उर्वरक का लाल भाग पानी के ऊपर तैरने लगता है।

इन परीक्षणों में यदि उर्वरक नकली मिले तो इसकी पुष्टि किसान सेवा केन्द्रों पर उपलब्ध टेस्टिंग किट से की जाती है। विविध कार्यवाही के लिए इसकी सूचना जनपद के उप कृषि निदेशक प्रसार या ज़िला कृषि अधिकारी एवं निदेशक (प्रदेश स्तर) को दी जा सकती है।

अतः उर्वरकों की शुद्धता को परख करके ही उर्वरक का उपयोग करें, ताकि नकली उर्वरकों से होने वाली आर्थिक हानि और मृदा तथा पौधों पर पड़ने वाले विपरीत प्रभाव से बचा जा सके। हम शुद्ध उर्वरक का उपयोग करके ही गुणों को संरक्षित कर सकते हैं।

उत्पादकता वृद्धि में फसल चक्र का महत्व

कविता भादू, पीएच.डी., राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर (एम.पी.)
डॉ. रोकश चौधरी, सहायक प्रोफेसर, कृषि विवि., जोधपुर (राजस्थान)

लगातार एक ही जगह एक ही फसल को उगाने से खरपतवार, पादप बीमारियों एवं कीट पंतगों को बढ़ावा मिलता है, जिसके कारण फसल नष्ट हो जाती हैं। फसल चक्र अपनाकर हम इस समस्या पर बिना किसी रसायन का प्रयोग किये ही काबू पा सकते हैं।

अलग-अलग तरह की फसलों को किसी निश्चित क्षेत्र पर, एक निश्चित क्रम से किसी निश्चित समय में बोने को फसल चक्र कहते हैं। इसका उद्देश्य यह है कि इससे आपकी भूमि की जैविक, रासायनिक और भौतिक दशाओं में संतुलन आता है और आपकी फसलों की गुणवत्ता और पोषकता भरपूर मात्रा में मिलती है। इस विधि के अंतर्गत एक विशेष खेत में नियमित सांचे व श्रेणी के अंदर उगने वाली वार्षिक और द्विवार्षिक फसलों की जातियों और कुलों को आपस में बदल दिया जाता है। ऐसा करने से
खरपतवार बीमारियां व कीटों चक्र टूट जाता है और मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ने लग जाती हैं। इसके अलावा मिट्टी में कार्बन तत्वों की मात्रा भी बढ़ जाती है और आपकी भूमि में बिना किसी रसायन के उपयोग से अच्छी से अच्छी फसल उग सकती है।

फसल चक्र क्या है :- किसी निश्चित क्षेत्र पर निश्चित अवधि के लिए भूमि की उर्वरता को बनाये रखने के उद्देश्य से फसलों को अदल-बदल कर उगाने की क्रिया को फसल चक्र या सस्य आवर्तन या सस्यचक्र या क्रॉप रोटेशन कहते है। अथवा किसी निश्चित क्षेत्र में एक नियत अवधि में फसलों को इस क्रम में उगाया जाना कि उर्वरा शक्ति का कम से कम ह्रस हो फसल चक्र कहलाता है।

फसल चक्र के उद्देश्य क्या है :- इसका उद्देश्य पौधों के भोज्य तत्वों का सदुपयोग तथा भूमि की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक दशाओं में संतुलन स्थापित करना है। फसल चक्र का जैविक खेती में भूमि की उर्वरता एवं खाद्य पदार्थों की शुद्धता बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

फसल चक्र क्यों आवश्यक है :- किसी खेत में लगातार एक ही फसल उगाने के कारण कम उपज प्राप्त होती है तथा भूमि की उर्वरता खराब होती है। भारत के अनेक भागों में प्रचलित सबसे लोकप्रिय फसल उत्पादक प्रणाली धान, गेहूं, मृदा-उर्वरता के टिकाऊपन के खतरे का स्पष्ट आभास कराती प्रतीय हो रही है। इसके कारण उपजाऊ सूक्ष्म जीवों की कमी, मित्र जीवों की संख्या में कमी, हानिकारक कीट पतंगों का बढ़ावा, खरपतवार की समस्या में बढ़ोत्तरी, जलधारण क्षमता में कमी, भूमि के भौतिक, रासायनिक गुणों में परिवर्तन, क्षारीयता में बढ़ोत्तरी, भूमिगत जल का प्रदूषण, कीटनाशीयों का अधिक प्रयोग तथा नाशीजवों में उनके प्रति प्रतिरोधक क्षमता का विकास आदि हानियां होती हैं। आज न तो केवल उत्पाद वृद्धि रूक गई है, बल्कि एक निश्चित मात्रा में उत्पादन प्राप्त करने के लिए पहले की अपेक्षा न बहुत अधिक मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग करना पड़ रहा है, क्योंकि भूमि में उर्वरक क्षमता उपयोग का ह्रास बढ़ गया है। इन सब विनाशकारी अनुभवों से बचने के लिए हमें फसल चक्र, फसल संघनता के सिद्धांतों को दृष्टिगत

रखते हुए फसल चक्र में दलहनी फसलों से एक टिकाऊ फसल उत्पादन प्रक्रिया विकसित होती है।

फसल चक्र को प्रभावित करने वाले कारक

जलवायु संबंधी कारक :- जलवायु के मुख्य कारक तापक्रम, वर्षा, वायु एवं नमी हैं। यही कारक जलवायु को प्रभावित करते हैं, जिससे फसल चक्र की प्रभावित होता है। जलवायु के आधार फसलों को तीन वर्गों में मुख्य रूप से बांटा गया है जैसे-खरीफ, रबी एवं जायद।

भूमि संबंधी कारक :- भूमि संबंधी कारकों में भूमि की किस्म, मृदा उर्वरता, मृदा प्रतिक्रिया, जल निकास, मृदा की भौतिक दशा आदि आते हैं। ये सभी कारक फसल की उपज पर गहरा प्रभाव डालते हैं।

सिंचाई के साधन :- सिंचाई जल की उपलब्धता के अनुसार ही फसल चक्र अपनाना चाहिए।

किसान की आर्थिक दशा :- किसानों की आर्थिक स्थिति का भी फसल चक्र पर प्रभाव पड़ता है। किसान के पास पूंजी एवं संसाधनों की उपलब्धता के अनुसार ही फसल चक्र अपनाना चाहिए।

बाजार की मांग :- बाजार की मांग के अनुरूर फसलें ली जानी चाहिए। जैसे-शहर के नजदीक वाली भूमिओं में साग-सब्जी वाली फसलों को प्राथमिकता देना चाहिए।

प्रक्षेत्र से बाजार की दूरी :- व्यापाकि दृष्टि से ली गई फसलों के लिए यह आवश्यक है कि बाजार प्रक्षेत्र के पास होना चाहिए।

आवागमन के साधन :- आवागमन के समुचित साधन उपलब्ध होने से फसल चक्र में सुविध के अनुसार फसलों का समावेश करना चाहिए।

श्रमिकों की उपलब्धता :- कृषि में श्रमिकों का मुख्य कार्य होता है। यदि श्रमिक आसानी से व पर्याप्त संख्या में उपलब्ध है तो संघन फसल चक्र अपनाया जा सकता है तथा फसल चक्र में नगदी फसलों को समावेशित लाभ लिया जा सकता है।

खेती का प्रकार :- यदि खेती का मुख्य अंग पशु पालन है तो ऐसी जगह चारे वाली फसलें ली जायें।

किसान की घरेलू आवश्यकताएं :- किसान को अपनी घरेलू आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर फसल चक्र अपनाना चाहिए।

सामाजिक रीति-रिवाज :- फसलों के चुनाव पर सामाजिक विचारों का भी प्रभाव पड़ता है जैसे-प्याज, लहसुन का सेवन न करने वाले किसान उन्हें उगाना नहीं चाहेंगे।

राजकीय नियंत्रण :- तम्बाकू, अफीम एवं भांग आदि की खेती पर आबकारी कर लगता है और अधिकांश लाभांश सरकार को देना पड़ता है। इस कारण इन फसलों को किसान अपने फसल चक्र मे नहीं लगाना चाहेंगे। इस प्रकार प्रत्येक राज्य में वहां की जलवायु एवं भूमि परिस्थिति के अनुसार अलग-अलग फसल चक्र अपनाये जा सकते हैं। फसल चक्र का जैविक खेती में भूमि की उर्वरता एवं खाद्य पदार्थो की शुद्धता बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं।

फसल चक्र के सिद्धांत :- फसल चक्र निर्धारण से पूर्व किसान को अपनी भूमि की किस्म, फसल किस्म, दैनिक अवश्यकताएं, लागत का स्वरूप तथा भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाये रखने के उद्देश्य को ध्यान में रखना चाहिए। अत: फसल चक्र अपनाते समय निम्न सिद्धांतों का अनुसरण करना चाहिए।

* दलहनी फसलों के बाद खाद्यान्न फसलें बोयी जायें। दलहनी फसलों की जड़ों में ग्रंथियां पाई जाती हैं। जिनमें राईजोबियम जीवाणु पाये जाते हैं। ये वायुमंडलीय नाईट्रोजन का स्थिरीकरण करती है। उदाहरण के लिए चना मक्का, अरहर गेहूं, मेथी, कपास, मूंग, गेहूं, लोबिया, ज्वार आदि। इस हेतु रबी खरीफ या जायद में से किसी भी ऋतु में दलहनी फसल अवश्य लेना चाहिए।

* गहरी जड़ वाली फसल के बाद उथली जड़ वाली फसल लगानी चाहिए। इसके विपरीत ऐसा करने मिट्टी की विभिन्न परतों में पोषक तत्वों, पानी एवं लवणों का समुचित उपयोग हो जाता है। जैसे कपास-मेथी, अरहर, गेहूं, चना, धान आदि।

* अधिक पानी चाहने वाली फसल के बाद कम पानी चाहने वाली फसल, फसल चक्र में कम सिंचाई चाहने वाली फसल एवं अधिक सिंचाई चाहने वाली फसल को एक क्रम में उगाना चाहिए। जैसे गन्ना, जौ, धान, चना या मटर आदि।

* अधिक पोषक तत्व चाहने वाली फसल के बाद कम पोषक तत्व चाहने वाली फसलें उगायें। जैसे आलू, लोबिया, गन्ना, गेहूं, आलू, कद्दूवर्गीय।

* अधिक कर्षणा क्रियायें परिष्करण या निराई-गुड़ाई चाहने वाली फसल के बाद कम कर्षण क्रियायें चाहने वाली फसल उगाना, इस प्रकार के फसल चक्र से मृदा की संरचना ठीक बनी रहती है एवं लागत में भी कमी आती है। जैसे मक्का, चना, आलू, प्याज, गन्ना, मूंग।

* दो-तीन वर्ष के फसल चक्र में खेत को एक बार खाली या पड़ती छोड़ा जाये। फसल चक्र में खेत में पड़ती छोड़ने से भूमि का उर्वरता में हो रहे लगातार ह्रास से बचा जा सकता है तथा अधिक पोषक तत्व चाहने वाली फसल से पूर्व खेत को एक बार खाली अवश्य छोड़ना चाहिए। जैसे मक्का, गेहूं, मूंग, ज्वार, चना पड़ती गेहूं 3 वर्षीय फसल चक्र।

* दूर-दूर पंक्तियों में बोयी जाने वाली फसल के बाद घनी बोई जाने वाली फसल उगानी चाहिए। वर्षा के दिनों में संघन एवं भूमि को आच्छदित करने वाली फसल लगाने से मृदा क्षरण कम होता है। जबकि दूर-दूर पंक्तियों में बोई गई, फसल से मिट्टी का कटाव अधिक होता है। अत: ऐसी फसलों का हेरफेर होना चाहिए, जिससे मृदा कटाव एवं उर्वरता ह्रास को रोका जा सके। जैसे-सोयाबीन गेहूं।

* दो तीन वर्ष के फसल चक्र में खरीफ में हरी खाद वाली फसल ली जाये इस प्रकार के फसल चक्र से भूमि उर्वरा शक्ति बनी रहती है, जो कि भूमि ये वायुमंडलीय नाईट्रोजन का स्थिरीकरण करती है। हरी खाद के द्वारा भूमि में 40-50 कि.ग्रा. नाईट्रोजन प्रति हैक्टेयर स्थिर होती है। इसके लिए सनई, ढैंचा, मूंग, उड़द आदि फसलों का उपयोग किया जा सकता है।

* फसल चक्र में साग-सब्जी वाली फसल का समावेश होना चाहिए अत: इसके लिए खरीफ, रबी या जायद की फसलों में से एक फसल सब्जी वाली होनी चाहिए। जैसे, आलू, प्याज, बैंगन, टमाटर आदि।

* फसल चक्र में तिलहनी फसल का समावेश होना चाहिए। घर की आवश्यकता को ध्यान में रखने हुये ऐसा फसल चक्र तैयार करना चाहिए जिसमें एक फसल तेल वाली हो। जैसे-सरसों, मूंगफली, तिल आदि।

* एक ही प्रकार की बीमारियों से प्रभावित होने वाली फसलों को लगातार एक ही खेत में नहीं उगाना चाहिए, इससे फसलों का चक्र बढ़ जाता है। जिससे फसलों की हानि नहीं उठानी पड़ती है। अच्छे फसल चक्र अपनाने से फसलों को कई बीमारियों से बचाया जा सकता है। जैसे कि चना एवं अरहर में उक्टा रोग की सही रोकथाम किसी खेत में 1-2 वर्ष के अंतराल में लगाने से की जा सकती है।

* फसल चक्र ऐसा होना चाहिए कि वर्ष भर उपलब्ध संसाधनों का समुचित उपयोग होता रहे। फसल चक्र निर्धारण के समय यह ध्यान रखना चाहिए कि किसान के पास उपलब्ध संसाधनों जैसे भूमि, श्रम, पूंजी, सिंचाई इत्यादि का वर्ष भर सदुपयोग होता रहे एवं किसान की आवश्यकताओं की पूर्ति फसल चक्रग में समावेशित फसलों के द्वारा होती रहे।

फसल चक्र से लाभ

पोषक तत्वों का समान व्यय :- फसलों की जड़ें गहराई तथा फैलाव में विभिन्न प्रकार की होती है, अत: गहरी तथा उथली जड़ वाली फसलों के क्रमश: बोने से पोषक तत्वों का व्यय विभिन्न गहराईयों पर समान होता है, जैसे-गेहूं व कपास।

पोषक तत्वों का संतुलन :- विभिन्न पौधे नाईट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश तथा अन्य पोष तत्व विभिन्न-भिन्न मात्राओं में लेते हैं। सस्य चक्र द्वारा इनका पारस्परिक संतुलन बना रहता है।

हानिकारक कीट और रोग तथा खरपतवार की रोकथाम :- एक फसल अथवा उसी जाति की अन्य फसलें, लगातार बोने से उनके हानिकारक कीड़े, रोग तथा साथ उगने वाली खरपतवार उस खेत में

शेष पृष्ठ 6 पर

कृषि कीटनाशकों के प्रकार एवं प्रयोग करते समय रखने वाली सावधानियां

लेख राज,
कृषि एवं किसान कल्याण विभाग, करनाल

कीटों का अर्थ केवल हानिकारक कीट ही नहीं होता है। इस भूमंडल पर हानिकारक कीटों के अतिरिक्त कुछ ऐसे कीट भी हैं, जो मानवजाति के लिए उपयोगी हैं। विश्व के कुछ भागों में कीटों को भोजन के रूप में भी खाया जाता है। फूलों में होने वाली परागण क्रिया में मधुमक्खियों, तितलियों व चींटियों का अहम् योगदान है। 80 प्रतिशत परागण क्रिया इन कीटों द्वारा ही होती है। गुब्रेल्ला जैसे कीट भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ाने में सहायक हैं। कुछ कीट ऐसे भी हैं, जो हानिकारक कीटों और खरपतवारों को नष्ट करते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ कीटों का प्रयोग दवाई बनाने में भी किया जाता है।

फसलों में हानिकारक कीटों की रोकथाम के लिए निम्न बातों की जानकारी अति आवश्यक है :

* मित्र व शत्रु कीटों की पहचान।
* कीटनाशक का उचित चुनाव।
* छिड़काव के लिए नोज़ल का उचित चुनाव।
* दवाई व पानी की उचित मात्रा।
* छिड़काव का उचित तरीका।

यदि हम उपरोक्त बातों का ध्यान रखें तो हानिकारक कीटों का सफलतापूर्वक नियंत्रण कर सकते है। इसके अतिरिक्त अंधाधुंध दवाईयों के प्रयोग से होने वाले दुष्प्रभाव से बचा जा सकता है।

सभी प्रकार के विष जिनका प्रयोग हानिकारक कीटों के नियंत्रण हेतु किया जाता है, कीटनाशक कहलाते है।

उत्पत्ति के आधार पर कीटनाशकों का वर्गीकरण :

1. कार्बनिक कीटनाशक : इन कीटनाशकों को पौधों के अर्क से तैयार किया जाता है और इनका फसल व वातावरण पर कोई कुप्रभाव नहीं पड़ता है।

2. अकार्बनिक : ये कीटनाशक कीटों को कार्बनिक कीटनाशकों की तुलना में शीघ्रता से मारते है, परन्तु इनका फसल और वातावरण पर कुप्रभाव पड़ता है।

3. असंश्लेषित कीटनाशक : ये कीटनाशक अकार्बनिक कीटनाशकों की तुलना में कीटों को शीघ्रता से मारते है, परन्तु इनका फसल और वातावरण पर कुप्रभाव ज्यादा पड़ता है।

विषाक्तता के आधार पर कीटनाशकों का वर्गीकरण : इसके अतिरिक्त कीटनाशकों को विषाक्तता के आधार पर भी बांटा जा सकता है। विषाक्तता के आधार पर कीटनाशक बोतलों पर चार रंग के त्रिकोण होते हैं, जो इस प्रकार है :

1. हरा : यह सबसे कम ज़हरीला होता है एवं मित्र कीटों को नहीं मारता है।

2. नीला : इसकी विषाक्तता हरे रंग वाले कीटनाशक से ज्यादा होती है और मित्र कीटों को कम मारता है।

3. पीला : इसकी विषाक्तता नीले रंग वाले कीटनाशक से ज्यादा होती है और मित्र कीटों को मारता है।

4. लाल : यह सबसे अधिक ज़हरीला होता है एवं मित्र कीटों को ज्यादा मारता है।

विषाक्तता के आधार पर कीटनाशकों के प्रयोग में ये सावधानियां बरतनी चाहिए :

* सर्वप्रथम हरे त्रिकोण वाले कीटनाशक का प्रयोग करना चाहिए।
* संश्लेषित कीटनाशक का प्रयोग 2-3 बार से अधिक नहीं करना चाहिए।
* कीटनाशकों का प्रयोग बदल-बदलकर करना चाहिए।

उपरोक्त जानकारों के अतिरिक्त कीटनाशकों के प्रयोग में निम्नलिखित सावधानियां रखनी चाहिए :

1. कीटनाशकों को जानवर और बच्चों की पहुंच से दूर रखें।
2. कीटनाशकों के प्रयोग के समय दस्ताना एवं चश्मा का प्रयोग करना चाहिए।
3. छिड़काव करते समय धूम्रपान नहीं करना चाहिए।
4. छिड़काव हवा के रुख के साथ करना चाहिए ताकि छिड़काव के छींटे शरीर पर न पड़ें।
5. कीटनाशक का प्रयोग करने से पहले कीटनाशक बोतल को अच्छी तरह हिलाना चाहिए।
6. घोल हमेशा खुले वातावरण में बनाना चाहिए।
7. छिड़काव करने के बाद शरीर व कपड़ों को साबुन से अच्छी तरह धोना चाहिए।
8. यदि गलती से ज़हर निगल लिया गया हो या सांस में चला गया हो तो एक गिलास गुनगुने पानी में एक चम्मच सादा नमक मिला कर पिलाएं एवं उलटी करवाएं। यह क्रिया तब तक दोहराएं, जब तक मरीज सामान्य अवस्था में न आ जाए। इसके बाद डॉक्टर के पास ले जाएं।
9. कीटनाशकों के प्रयोग में लापरवाही जानलेवा हो सकती है, इसलिए इस कार्य को पूरी सावधानी से करें।

शेष पृष्ठ 5 की

उत्पादकता वृद्धि में फसल चक्र का महत्व

बनी रहती है।

श्रम, आय तथा व्यय का संतुलन :- एक बार किसी फसल के लिए अच्छी तैयारी करने पर दूसरी फसल बिना विशेष तैयारी के ली जा सकती है और अधिक खाद चाहने वाली फसल को पर्याप्त मात्रा में खाद को देकर, शेष खाद पर अन्य फसलें लाभ के साथ ली जा सकती

समय का सदुपयोग :- इससे कृषि कार्य उत्तम ढंग से होता है। खेत एवं किसान व्यर्थ खाली नहीं रहते हैं।

भूमि के विषैले पदार्थों से बचाव :- फसलों जड़ों से कुछ विषैला पदार्थ भूमि में छोड़ती हैं। एक ही फसल बोने से भूमि में विषैले पदार्थ अधिक मात्रा में एकत्रित होने

है, जैसे-आलू के पश्चात प्याज या कद्दूवर्गीय आदि।

भूमि में कार्बनिक पदार्थ की पूर्ति :- निराई-गुड़ाई चाहने वाली फसलें आलू, प्याज आदि बोने से भूमि में जैव पदार्थों की कमी हो जाती है इनकी पूर्ति दलहन वर्ग की फसलों तथा हरी खाद के प्रयोग से हो जाती है।

भूमि में नाईट्रोजन की पूर्ति :- दलहन वर्ग की फसलों की जैसे सनई, ढैंचा, मूंग इत्यादि भूमि में तीन या चार वर्ष में एक बार जोत देने से न केवल कार्बनिक पदार्थ ही मिलते हैं। अपितु नाईट्रोजन भी मिलता है, क्योंकि इनकी जड़ की छोटी-छोटी गांठों में नाईट्रोजन स्थापित करने वाले जीवाणुं होते हैं।

खरपतवार की सफाई :- निराई-गुड़ाई चाहने वाली फसलों के बोने से खरपतवार का सफाया अपने आप हो जाता है।

कटाव से बचत :- उचित फसल चक्र से वर्षा के जल से भूमि का कटाव रूक जाता है तथा खाद्य पदार्थ बहने से बच जाते हैं।

के कारण हानि पहुंचाते हैं।

अधिक उपज :- उपर्युक्त कारणों से फसल की उपज प्रायः अधिक हो जाती हैं।

उर्वरा शक्ति की रक्षा :- भूमि की उर्वरा शक्ति ठीक रखी जा सकती है।

निष्कर्ष :- अंततः इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि फसल चक्र से मृदा उर्वरता बढ़ती है, भूमि में कार्बन-नाईट्रोजन के अनुपात में वृद्धि होती है। भूमि के पी.एच. तथा क्षारीपत में सुधार होता है। भूमि की संरचना में सुधार होता है। मृदा क्षरण की रोकथाम होती है। फसलों का बीमारियों से बचाव होता है, कीटों का नियंत्रण होता है, खरपतारों की रोथकाम होती है, वर्ष भर आय प्राप्त होती रहती है। भूमि में विषाक्त पदार्थ एकत्र नहीं होने पाते हैं। उर्वरक, अवशेषों का पूर्ण उपयोग हो जाता है। सीमित सिंचाई सुविधा का समुचित उपयोग हो जाता है। अतः संपोषित विकास के लक्ष्य प्राप्ति हेतु फसल चक्र आवश्यक है।

शेष पृष्ठ 2 की

कोर्डिसेप्स : एक औषधीय मशरूम और कोर्डिसेप्स मिलिटेरिस प्रजाति का वैज्ञानिक उत्पादन

10 ग्राम या उससे भी अधिक हो सकती है। इसके एक्सट्रेक्ट सूखे मशरूम की तुलना में अधिक महंगे होते हैं और इसकी कीमत लगभग 2000 से 5000 रुपए प्रति 30 ग्राम पैकेज हो सकती है, जो ब्रांड, संघटकता और गुणवत्ता पर निर्भर करती है। कैप्सूल या गोलियों में अन्य सामग्रियों के साथ *सी. मिलिटेरिस* एक्सट्रेक्ट आमतौर पर 500 से 2000 रुपए प्रति 30/60 कैप्सूल की शीशी हो सकती है और यह भी ब्रांड और संघटकता पर ही निर्भर करती है।

***कॉर्डिसेप्स मिलिटेरिस* के स्पान और मशरूम उत्पादन की प्रौद्योगिकी :** इस मशरूम के उत्पादन के लिए स्पॉन तैयार करना और मशरूम उत्पादन मुख्य रूप से शामिल होते है, केवल प्रयोगशाला में ही इसका उत्पादन संभव है, जहां तापमान, आर्द्रता, रोशनी और ताज़गी हवा का आवागमन किया जा सके। इस मशरूम के युद्ध माइसिलियम को पोटेटो डेक्सट्रोज अगर (पी.डी.ए.) माध्यम पर फैलाया और बढ़ाया जा सकता है। मशरूम के कल्चर को 8-10 दिनों तक अंधेरे में रखा जाता है ताकि माध्यम पर जला फैल सके और कुछ दिनों में यह फफूंद सफेद

रंग के जाले के रूप में दिखने लगती है, लेकिन 4-5 दिनों तक प्रकाश में रखने पर यह नारंगी रंग में परिवर्तित हो जाती है। इसका स्पान ज्यादातर तरल मीडियम (पोटेटो डेक्स्ट्रोज ब्रोथ) पर बनाया जाता है। इस तरल माध्यम में मशरूम का कल्चर डालने पर 10-12 दिनों के लिए शेकर पर 150 आर.पी.एम. की स्पीड पर रख कर हिलाया जाता है, जिसके बाद इसे स्पान के रूप में प्रयोग किया जाता है। *कॉर्डिसेप्स मिलिटेरस* को पूरे चावलों और कुछ अन्य अवयवों के इस्तेमाल करने पर उत्पन्न किया जा सकता है। सबस्ट्रेट के लिए एक आधारीय तरल मीडियम (अ) बनाया जाता है, जिसमें पेप्टोन (10 ग्राम), ग्लूकोज (20 ग्राम), मैग्नीशियम सल्फेट (5 ग्राम), पोटाशियम ओर्थोफास्फेट (0.1 ग्राम), रेशम के कीड़े का लारवा-पाउडर (3 ग्राम), विटामिन बी-1 (0.1 ग्राम), शुद्ध जल (1 लीटर)। दूसरा ठोस मीडियम (ब) जिसमें भूरे चावल और अगर-अगर का प्रयोग किया जाता है। स्वच्छ ग्लास बोतलों में 30 मिलीलीटर तरल मीडियम (अ) तथा ठोस मीडियम (ब) जिसमें 30 ग्राम भूरे चावल + 2 ग्राम अगर-अगर होता है। इन दोनों मीडियम को कांच की बोतलों में डाल कर ऑटोक्लेविंग द्वारा निर्जीवीकरण किया जाता है और एक उपयुक्त तापमान पर रख कर ठंडा किया जाता है। स्पान (10 मिलीलीटर/बोतल) को लेमिनार फ्लो की मौजूदगी में सब्स्ट्रेट में डाला जाता है। इसके बाद इन बोतलों में एक उचित वातानुकूलित नियंत्रित कक्ष में 10-12 दिनों के लिए रखा जाता है, जहां तापमान (20-25 डिग्री सैल्सियस), आपेक्षिक आर्द्रता (65-70 प्रतिशत) और अंधेरा बना कर रखा जा सके। सब्सट्रेट में फफूंद का पूरा जाला फैलने के बाद दूसरे चरण में इसके फलन के लिए कक्ष में वातावरण को बदला जाता है, क्योंकि फलन के वक्त उत्पादन कक्ष में 1000 लक्स प्रकाश की ज़रुरत होती है, जिसे सामान्य फ्लोरेसेंट ट्यूब लाइट/एल.ई.डी. द्वारा दी जा सकती है (चित्र 1)। कुछ समय के बाद बोतल में सब्सट्रेट से पीले रंग की कलियां निकलनी शुरू हो जाती है। और परिपक्व होकर मशरूम नारंगी रंग जैसी संरचनाओं की तरह हो जाती है (चित्र 2 एवं चित्र 3)। जब फल की लंबाई 5 से 6 सैंटीमीटर तक पूरी तरह से विकसित हो कर पक जाती है (चित्र 4) तब उनकी कटाई की जाती है। इस कटी हुई मशरूम को संरक्षण के लिए सुखाया जाता है या सीधे बेचा जा सकता है।

ईसबगोल उत्पादन की वैज्ञानिक विधि

गंगाशरण सैनी,
कृषि बागवानी सलाहकार,
5ई–9बी, बंगला प्लाट,
फरीदाबाद–121001 (हरियाणा)

ईसबगोल एक बहु-उपयोगी एवं निर्माता-मुखी औषधीय फसल है। यह मूलत: भूमध्य सागरीय क्षेत्रों एवं पश्चिमी एशिया का मूल निवासी पौधा है। ईसबगोल शब्द की उत्पत्ति दो फारसी शब्दों 'अस्प' एवं 'गोल' से हुई मानी जाती है, जिसका अर्थ है 'घोड़े का कान'। इसका बीज नाव के आकार के अथवा घोड़े के कान के आकार के होते है। सम्भवत: इसी कारण इसका नाम अस्प घोल अथवा ईसबगोल पड़ा है। विश्व में ईसबगोल की करीब 200 किस्में पाई जाती है, जिनमें से लगभग 15 किस्में भारत में पाई जाती है, परन्तु इनमें सर्वाधिक महत्व की किस्म 'प्लांटेगे ओवेटा' है, जिसके बीज एवं भूसी का उपयोग कई सदियों से विभिन्न रोगों के उपचार हेतु किया जा रहा है। भारत में इसके बीज एवं भूसी का वार्षिक उत्पादन क्रमश: 13000 टन व 32000 टन है, जिसका 90 प्रतिशत उत्पादन विदेशों को निर्यात किया जाता है, जिससे विदेशी मुद्रा की प्राप्ति होती है।

भारत में उत्तरी गुजरात के बनासकांठा और महसाना जिलों में इसकी खेती बड़े पैमाने पर की जाती है। पंजाब के दक्षिणी मैदानी भागों जैसे पटियाला के आस-पास के क्षेत्रों, हरियाणा में हिसार के आस-पास के क्षेत्रों, उत्तर प्रदेश और राजस्थान के कुछ क्षेत्रों, मध्य प्रदेश के मालवा क्षेत्र में इसकी खेती की जाती है। देश व विदेश में इसके बीज एवं भूसी की भारी मांग है। अत: इसकी व्यवसायिक खेती की भारी मांग है। इसकी वैज्ञानिक विधि खेती का उल्लेख इस लेख में किया गया है।

जलवायु : ईसबगोल ठंडी एवं शुष्क जलवायु में तैयार होने वाली औषधीय फसल है। इसके अंकुरण के समय 20-25 डिग्री सैल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है, जबकि इसकी वानस्पतिक बढ़वार हेतु 30-35 डिग्री सैल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। ईसबगोल के सफल उत्पादन में जलवायु का अत्याधिक महत्व है। इसकी बुवाई सही समय पर की जानी चाहिए और दूसरे इसकी कटाई भी उचित समय पर की जानी चाहिए।

भूमि : वैसे तो ईसबगोल को विभिन्न प्रकार की भूमियों में उगाया जा सकता है, परन्तु इसकी भरपूर उपज लेने हेतु उचित जल निकास वाली रेतीली दोमट भूमि जिसका पी.एच. मान 6.5-8.5 तक हो, जीवांश पदार्थ प्रचुर मात्रा में हो, सर्वोत्तम मानी गई है।

खेत की तैयारी : ईसबगोल की बुवाई से पूर्व खेत की भली-भांति जुताई करके खरपतवार-रहित किया जाना नितान्त आवश्यक है। जुताई इस प्रकार की जानी चाहिए कि भूमि भुरभुरी हो जाए और इसमें ढेले ना रहें। अन्तिम जुताई के उपरान्त पाटा लगाएं, फिर खेत को सुविधाजनक प्लाटों में बांट लिया जाता है, ताकि उनमें आगामी कृषि क्रियाएं सुविधा से की जा सकें।

खाद एवं उर्वरक : ईसबगोल की उच्च गुणवत्ता वाली अधिक उपज लेने हेतु मृदा-जांच अनिवार्य है। यदि किसी कारणवश मृदा जांच ना हो सके तो सामान्य उर्वरकता वाली भूमि प्रति हैक्टेयर निम्न मात्रा में खाद एवं उर्वरक अवश्य डालें।

गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद	– 10-15 टन
नाइट्रोजन	– 50 किलो
फास्फोरस	– 50 किलो
पोटाश	– 25 किलो

गोबर की खाद या कम्पोस्ट की खाद को जुलाई से पूर्व खेत में समान रूप से बिखेर देना चाहिए, जबकि नाइट्रोजन की आधी मात्रा, पूरी फास्फोरस व पोटाश का मिश्रण बना कर अन्तिम जुताई के समय डालना चाहिए। नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा को खड़ी फसल में डालना चाहिए, जब वह एक माह की हो जाए, टॉप ड्रेसिंग के रूप में डालनी चाहिए। ऐसा करने से अधिक पैदावार मिलती है।

केवल उन्नत किस्में ही उगाएं

गुजरात ईसबगोल-1 : यह किस्म प्रति हैक्टेयर 9 क्विंटल तक उपज दे देती है।

गुजरात ईसबगोल-2 : यह किस्म प्रति हैक्टेयर 10 क्विंटल तक उपज दे देती है।

नोट : उपरोक्त दोनों किस्में गुजरात में अत्यंत लोकप्रिय है।

हरियाणा ईसबगोल-3 : यह किस्म प्रति हैक्टेयर 10-12 क्विंटल उपज दे देती है। यह किस्म हरियाणा में अत्यन्त लोकप्रिय है।

जवाहर ईसबगोल-4 : यह किस्म प्रति हैक्टेयर 10-12 क्विंटल उपज दे देती है। यह किस्म मध्य प्रदेश में अत्यंत लोकप्रिय है।

बल्लभ ईसबगोल-1 : यह किस्म 120 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। यह भारत के अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में खेती के लिए जारी कर दी गई है। यह प्रति हैक्टेयर 12 क्विंटल तक उपज दे देती है।

बल्लभ ईसबगोल-2 : यह एक अगेती किस्म है, जो मात्र 100 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। यह किस्म 9.16-13.6 क्विंटल तक प्रति हैक्टेयर उपजदे देती है।

बल्लभ ईसबगोल-3 : यह भी एक अगेती किस्म है, जो मात्र 100 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। यह किस्म 8.97-14.4 क्विंटल तक प्रति हैक्टेयर उपज दे देती है।

प्रबंधन : ईसबगोल का प्रबंधन बीज द्वारा किया जाता है। अत: इसका बीज प्रमाणित संस्थान से ही लेना चाहिए।

बोने का उचित समय : ईसबगोल के बीज की बुवाई उचित समय पर ही करनी चाहिए, अन्यथा उपज में भारी कमी हो जाती है। आमतौर पर ईसबगोल की बुवाई अक्तूबर से दिसम्बर तक की जाती है, जबकि उत्तरी भारत में इसकी बुवाई का सर्वोत्तम समय 15 अक्तूबर से 15 नवम्बर तक है।

बीज की उचित मात्रा : ईसबगोल के बीज की मात्रा इस बात पर निर्भर करती है कि उसे किसी विधि द्वारा उगाया जा रहा है। प्रति हैक्टेयर कितना बीज पर्याप्त होता है, उसका उल्लेख नीचे किया गया है :-

छिटकवां	10-13 किलोग्राम
पंक्तियों में	8-9 किलोग्राम
पौधशाला में	5 किलोग्राम

बुवाई की विधियां :

छिटकवां विधि : तैयार खेत में सिंचाई सुविधा अनुसार क्यारियां बना ली जाती है, फिर बीज में 5 गुना छनी हुई रेत ओर गोबर की खाद बीजों में मिला कर क्यारियों में बिखेर दी जाती है। फिर रेत की सहायता से मिट्टी में मिला दिया जाता है।

पंक्तियों में बुवाई : इस विधि में हल के पीछे 25-30 सैंटीमीटी की दूरी पर बने कूंडों में बुवाई की जाती है, फिर कूंडों को हल्की मिट्टी की परत से ढक दिया जाता है।

पौधशाला में बीज बोकर : इस विधि में पौधशाला के लिए भूमि का चयन करके फिर उसकी जुताई/खुदाई कर ली जाती है। जुताई/गुड़ाई से पूर्व उसमें प्रचुर मात्रा में गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद डाल दी जाती है। बीजों में 5 गुना रेत मिला कर पौधशाला में समान रूप से बिखेर दिया जाता है। फिर रैक की सहायता से भूमि में मिला देना चाहिए। पौधशाला में आवश्यकता अनुसार सिंचाई करते रहें। एक माह में पौध रोपाई के योग्य हो जाती है।

रोपाई : पौध की रोपाई पंक्तियों में 25-30 सैंटीमीटर की दूरी पर और पौध से पौध की दूरी 10-15 सैंटीमीटर रखनी चाहिए।

नोट : उपरोक्त तीनों विधियों में बीज बोने या रोपाई करने के बाद हल्की सिंचाई करनी चाहिए।

सिंचाई एवं जल निकास : ईसबगोल के बीजों का अंकुरण 4-5 दिन में प्रारम्भ हो जाता है और 7-8 दिन में अंकुरण की प्रक्रिया पूरी हो जाती है। यदि इस दौरान अंकुरण ना हो तो एक हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। देश के विभिन्न भागों में जलवायु एवं मौसम की विभिन्नता के कारण इसकी सिंचाई संख्या में विभिन्नता पाई जाती है। प्रथम सिंचाई अंकुरण के 25-30 दिन बाद करनी चाहिए। इसके उपरांत 3-4 सिंचाईयां 1-1 माह बाद करनी चाहिए। गुजरात में 6-7 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है, जबकि उत्तराखंड के तराई क्षेत्र में इसे सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है, वहां पर केवल पलेवा करके ईसबगोल की बुवाई की जाती है। ईसबगोल में अंतिम सिंचाई अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। बालों में दूध बनने और बीज भरने की अवस्थाओं में सिंचाई आवश्यक करनी चाहिए।

पौध संरक्षण उपाय :

खरपतवार नियंत्रण : ईसबगोल की फसल के साथ अनेक खरपतवार उग आते है, जो फसल के साथ नमी, पोषक तत्वों, स्थान, धूप, वायु आदि के लिए प्रतिस्पर्धा करते है। अत: अच्छी एवं स्वस्थ फसल प्राप्त करने हेतु 2-3 बार निराई-गुड़ाई अवश्य करनी चाहिए। प्रथम निराई-गुड़ाई बोने के 25-30 दिन बाद करनी चाहिए। इसके साथ निराई-गुड़ाई 1-1 माह बाद करनी चाहिए। ऐसा करने से उच्च गुणवत्ता वाली अधिक उपज की फसल ली जा सकती है।

रोग नियंत्रण

चूर्णी फफूंद : यह एक फफूंदी जनित रोग है, जिसके कारण पौधों के विभिन्न भागों पर चूर्ण जैसा एकत्र हुआ दिखाई देता है और यह पत्तियों के दोनों ओर होता है। रोगी पौधों में बीज का निर्माण कम होता है और उनकी गुणवत्ता भी कम हो जाती है।

इस रोग के नियंत्रण हेतु फूल आने के उपरांत रोग के लक्षण दिखाई देने के पश्चात् इंडोथेन एम-45 के 0.2 प्रतिशत घोल का पर्णीय छिड़काव करना चाहिए या इसकी रोकथाम हेतु आधा लीटर कैराथेन को 800-1000 लीटर पानी में घोल कर प्रति हैक्टेयर की दर से पर्णीय छिड़काव भी कर सकते हैं।

मृदुरोमिल आसिता : यह रोग पैरानोस्पोरा प्लांटैजिनिस और पै एल्टा नामक फफूंदियों के कारण होता है। यह रोग बालियों के निर्माण के समय होता है। शुरू में पत्तियों पर छोटे-छोटे धब्बों का निर्माण होता है। बाद में पूरी पत्तियों पर फैल जाते है और उन्हें नष्ट कर देते है।

इस रोग के नियंत्रण हेतु निम्न उपाय करने चाहिए :

* बीज को बोने से पूर्व थीरम या सरेसान 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें।

* रोगरोधक उपाय के तौर पर बोर्डो मिश्रण 6:3:100 को 600-800 लीटर थाली में घोल बना कर पर्णीय छिड़काव करें।

दीमक : इस कीट का प्रकोप शुष्क क्षेत्रों में अधिक होता है। यह पौधों की जड़ों को काट कर खाता है, जिसके कारण पौधा गिर जाता है।

सफेद सुंडी : यह कीट फसल की प्रारंभिक अवस्था में पौधों की जड़ों को काट कर क्षति पहुंचाता है, जिसके कारण फसल की उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

उपरोक्त दोनों कीटों के नियंत्रण हेतु निम्न उपाय करने चाहिए :

* खेत की तैयारी के समय 500-750 किलोग्राम बीज की खली प्रति हैक्टेयर की दर से भूमि में मिलानी चाहिए।

* 4 लीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. को सिंचाई के साथ प्रति हैक्टेयर की दर से उपयोग करना चाहिए।

फसल की कटाई : ईसबगोल की फसल आमतौर पर 105-120 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। जब इसकी पत्तियां पीली पड़ने लगें और बालियां मटमैले/भूरे रंग की हो जाएं और बाली को हल्का दबाने से दाने निकलने लगें, तो समझ जाना चाहिए कि फसल कटाई के लिए तैयार है। ऐसी अवस्था आने पर फसल की कटाई तुरंत कर लेनी चाहिए। यदि फसल की इस अवस्था में कटाई नहीं की गई, तो दाने झड़ जाएंगे। फसल की कटाई ओस सूखने के उपरांत ही करनी चाहिए।

फसल को जड़ के समीप से ही काटना चाहिए। फसल को 10 बजे के उपरांत ही काटना चाहिए। फसल काटने के उपरांत पक्के फर्श पर सूखने के लिए फैला देनी चाहिए। आमतौर पर 2 दिन में फसल सूख जाती है।

फसल की गहराई : सूखी फसल पर बैलों या ट्रैक्टर को घुमा कर गहराई की जाती है और ओसाई करके बीज अलग कर लिए जाते है। भूसे को चारे के रूप में प्रयुक्त किया जाता है।

उपज : ईसबगोल की उपज

कई बातों पर निर्भर करती है, जिनमें जलवायु, भूमि की उर्वरा शक्ति, उगाई जाने वाली किस्म व फसल की देखभाल प्रमुख है। यदि उपरोक्त वर्णित वैज्ञानिक विधि से इसकी खेती की जाए, तो प्रति हैक्टेयर 12 क्विंटल उपज सुगमता से मिल जाती है।

लाभ : प्रति हैक्टेयर 35-40 हज़ार रुपए का शुद्ध लाभ मिल जाता है। ❑

BOOK POST - PRINTED MATTER

बूढ़े होते पाम के पेड़ों से मंडरा सकता है पाम ऑयल का संकट

पूर्वे दक्षिण पूर्व एशिया में उप्रदराज होते पाम यानी ताड़ के पेड़, जिनमें से कुछ 12 मंजिला इमारत जितने ऊंचे हैं, हर जगह स्थानीय किसानों, सरकारों और उपभोक्ताओं के लिए अरबों डॉलर का सिरदर्द बनते जा रहे हैं। जैसे-जैसे पाम ट्री एक अपनी 25 साल की व्यवसायिक उम्र के करीब पहुंचते हैं, उनसे तेल का उत्पादन घटने लगता है। कुछ पेड़ इतने ऊंचे हो जाते हैं कि मज़दूरों के लिए लंबे डंडे में लगी दरांती के उपयोग से फल तोड़ पाना मुश्किल हो जाता है। मलेशिया और इंडोनेशिया जैसे दुनिया के सबसे ज्यादा पाम उत्पादक देशों में कोविड महामारी के बाद वैसे ही मज़दूरों की संख्या काफी घट गई है, ऐसे में किसान पाम की नई फसल लगाना टाल रहे हैं। ऊंची लागत और गिरती पैदावार से परेशान कई छोटे किसानों का तर्क है कि वे दोबारा रोपाई नहीं कर सकते।

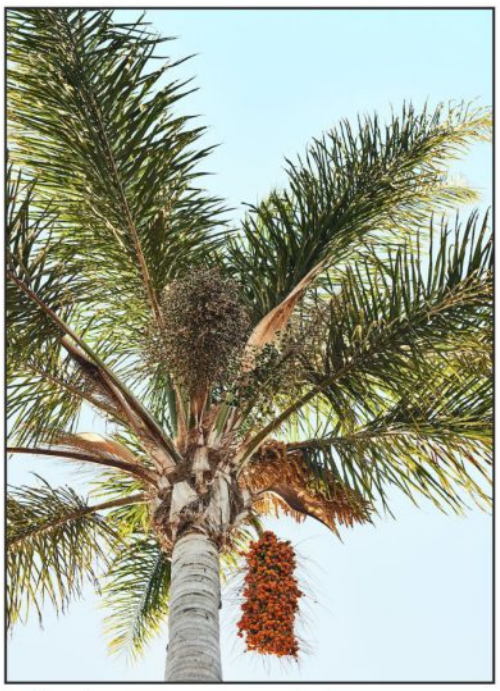

हैम्बर्ग स्थित संगठन का अनुमान है कि 2030 तक पाम ट्री की सालाना उत्पादन वृद्धि 18 लाख टन या उससे कम हो सकती है, जोकि एक दशक से 2020 तक औसतन 29 लाख टन थी। मलेशियन पाम ऑयल एसोसिएशन का अनुमान है कि देश में 6.64 लाख हैक्टेयर या देश के कुल पाम प्लांटेशन का 12 प्रतिशत हिस्सा 25 साल से ज्यादा उम्र वाले पेड़ों का हो चुका है। 2027 तक देश के एक-तिहाई पाम ट्री बूढ़े हो जाएंगे। इन्हें रिप्लेस करने की औसत लागत 20,000 रिंगिट (3.5 लाख रुपए) प्रति हैक्टेयर होगी।

पाम ऑयल वनस्पति तेल है। दुनियाभर में इसका व्यापक इस्तेमाल होता है। सस्ता होने की वजह से होटल, रेस्टोरेंट्स में भी पाम तेल का इस्तेमाल खाद्य तेल की तरह होता है। इसमें सैचुरेटेड फैट बहुत अधिक होता है, यह बहुत ऊंचे तापमान पर पिघलता है। इसलिए कई उद्योगों में इसका इस्तेमाल होता है।

जैविक खेती की अलख जगा रहा प्रगतिशील किसान नवीन दर्दी

100 किसानों का ग्रुप बना 100 एकड़ में उगा रहा सब्ज़ियां

खेती को लाभदायक बनाने, मूल अनाजों की गुणवत्ता व जैविक खेती को प्रोत्साहित करने के लिए यहां का नौजवान प्रगतिशील किसान नवीन दर्दी वर्ष 2009 में जैविक खेती करने की अलाख जगा रहा है। इसके चलते ज़िला प्रशासन उसे सम्मानित भी कर चुका है। जैविक खेती को प्रोत्साहित करने के लिए नवीन दर्दी ने फार्मर ग्रुप बनाया हुआ है, जिससे करीब 100 किसान जुड़े हुए हैं। वह अन्य किसानों के साथ मिल कर 100 एकड़ ज़मीन में सब्ज़ियां, गेहूं, धान, नरमा, आलू, प्याज़, लहसुन, टमाटर, मोटा अनाज, मूंगफली आदि की खेती जैविक तरीके से कर रहे हैं। इससे जल संरक्षण भी हो रहा है।

दर्दी का कहना है कि उसने वर्ष 2009 में जैविक खेती शुरू की थी। वह जैविक खेती के लिए वर्मी कम्पोस्ट, बायो फर्टिलाइज़र का इस्तेमाल करते हैं। अनाजों व सब्ज़ियों की पैदावार के लिए वर्मी कम्पोस्ट का इस्तेमाल करने से मित्र कीट केंचुआ बढ़ते हैं। ज़मीन की उपजाऊ शक्ति भी बढ़ती है। यूरिया व डाया डालने से पैदावार तो बढ़ सकती है, लेकिन ज़मीन को भी बीमारी लगने से खेती भी खत्म हो जाती है। डाया का थैला 1200 से 1400 तक (50 किलो) मिलता है। खैर, वह 30 हज़ार से 32 हज़ार रुपए के हिसाब से एक वर्ष के लिए एक एकड़ ज़मीन ठेके पर लेकर अब करीब 100 एकड़ में जैविक खेती कर रहे हैं। वर्मी कम्पोस्ट करीब 600 रुपए क्विंटल के हिसाब से मिलती है। वह भविष्य में वर्मी कम्पोस्ट का प्लांट लगाने की तैयारी कर रहे हैं, जिससे किसानों को वर्मी कम्पोस्ट सस्ते रेट पर मिलेगी। गोबर लेने के लिए गांवों के किसानों से सम्पर्क किया जाएगा।

खेतीबाड़ी विभाग, कृषि विज्ञान केन्द्र व फार्मर ग्रुप ने दिया सहयोग

नवीन दर्दी का कहना है कि जैविक खेती के काम में उनको खेतीबाड़ी विभाग के डॉ. रणजोध सिंह, कृषि विज्ञान केन्द्र, रोपड़ के डॉ. संजीव आहूजा व रमन करोडिया का सहयोग मिल रहा है। फार्मर ग्रुप के सदस्य ध्यान सिंह, मनजीत सिंह, गुरदीप सिंह, अमृतपाल सिंह, भूपिंदर सिंह, तरविंदर सिंह, बहादुर सिंह भी मददगार हैं। प्रगतिशील किसान दर्दी के अनुसार, शामपुरा गांव में 14 एकड़ में किसान ध्यान सिंह के साथ मिल कर मक्की व धान की खेती की थी, लेकिन बाढ़ ने सब चौपट कर दिया। अब वहां 2 एकड़ में गोबी, आलू, प्याज़, लहसुन आदि की खेती रासायनिक स्प्रे के बिना की जा रही है।

हरचोवाल का नवतेज सिंह हल्दी की खेती कर किसानों के लिए बना मिसाल

3 साल पहले शुरू की खेती, प्रति एकड़ 6 लाख की कमाई

पंजाब के ज़िला गुरदासपुर में हरचोवाल गांव के किसान ने कृषि क्षेत्र में नए कदम उठाते हुए हल्दी की सफल खेती कर एक मिसाल कायम की। कुछ साल पहले तक गेहूं-धान के चक्र में फंसे रहने वाले नवतेज सिंह को लगा कि उसको इस चक्र में फंसे रहने वाले नवतेज सिंह को लगा कि उसको इस चक्र से बाहर निकल कर अपनी आय बढ़ाने के लिए अन्य फसलें पैदा करनी चाहिए। तब उन्होंने इसके बारे में सोचना शुरू किया। इसके बाद उसने बागवानी विभाग से सम्पर्क कर बागवानी और सब्ज़ियों की खेती के बारे में जानकारी प्राप्त की।

उद्यानिकी विभाग ने उसे हल्दी की खेती करने की सलाह दी। इसके संबंध में किसान ने उद्यानिकी विभाग से हल्दी की खेती और प्रसंस्करण का प्रशिक्षण भी लिया। नवतेज सिंह ने 3 साल पहले अपने खेतों में 4 एकड़ में हल्दी की खेती शुरू की। उसने हल्दी की प्रोसैसिंग यूनिट भी लगाई और बाद में हल्दी का पाउडर बना कर पैकिंग भी शुरू की। अपने उत्पाद का 'सांझा फूड' नाम से पंजीकरण करवा कर बाज़ार में उतारा। बाज़ार से अच्छी प्रतिक्रिया मिलने के बाद उसने हल्दी की खेती का रकबा और बढ़ा दिया। अब वह अपने गांव के अन्य किसानों के साथ मिल कर 15 एकड़ में हल्दी की खेती करता है। हल्दी की उच्च गुणवत्ता और बाज़ार में उसके ब्रांड की पहचान के बाद अब उनका नाम हल्दी उत्पादन के अग्रणी किसानों में गिना जाता है।

हल्दी की खेती से बढ़ी आय

किसान नवतेज सिंह का कहना है कि हल्दी अप्रैल में बोई जाती है और फरवरी में काट ली जाती है। पीसने के बाद हल्दी को प्रसंस्करण संयंत्र में साफ और धोया जाता है। उसके बाद उबाला जाता है, फिर सुखाकर पीस लिया जाता है। फिर हल्दी पाउडर को पैक करके बाज़ार में बेचा जाता है। गेहूं-धान की तुलना में हल्दी से उसकी आय बढ़ी है। एक एकड़ का उत्पादन हल्दी पाउडर बना कर बाज़ार में बेचा जाता है, तो 6 लाख रुपए तक की कमाई हो जाती है।

एक एकड़ में 150 क्विंटल उत्पादन

उनका मानना है कि सब कुछ मेहनत करने पर निर्भर है। गुड़ाई का काम सबसे अधिक रहता है। जिसने ढंग से गुड़ाई कर ली, उसने मानो मैदान मार लिया वरना सामान्य आमदनी होती है। वह पंजाब नंबर 2 और सीलम किस्मों की खेती करता है। इनकी करक्यूमिन वैल्यू भी बेहतर है। इस खेती पर एक एकड़ में 40 हज़ार रुपए का खर्च और 2.10 लाख रुपए तक की आमदनी हो जाती है। अगर पाउडर बना कर बाज़ार में बेचा जाए, तो आमदनी 6 लाख रुपए तक चली जाती है। एक एकड़ में 150 क्विंटल उत्पादन होता है। इसका 5वां हिस्सा (30 क्विंटल) हल्दी पाउडर बन जाता है।

किसानों के हित में जारी

बीजोपचार

अच्छी फसलों का मूल आधार

बीजोपचार के लाभ

★ अधिक अंकुरण

★ अधिक प्रबल पौधे

★ आरंभिक बिमारियों का प्रभावी नियंत्रण

★ स्वस्थ पौधों की संख्या ज्यादा

देश के सभी किसान, पढ़ें होकर होशियार
अच्छी पैदावार तभी होगी, जब बीजों का हो सही उपचार